॥ श्रीकृष्णाय नमः॥

॥ श्रीमदाचार्यचरणकमलेभ्यो नमः॥

श्रीभागवतस्कन्धप्रकरणाध्यायविभाग
सूचिका

भगवत्प्रेमसे अन्य न कोई साधन उत्तम॥
सदा भागवत पढ़ो-सुनो साधन सर्वोत्तम॥१॥
द्रव्यलाभके हेतु उन्हें जानो अधमाधम॥
दम्भप्रयोजनरहित होंय तो जानो सत्तम॥२॥
वल्लभका उपदेश भला क्यों भूल गये हम!॥
पुष्टिमार्ग-अनुगामी होनेका भरते क्यों दम?॥३॥
गोपीनाथ प्रभुचरण वल्लभसुत सक्षम!॥
पंचशती निष्ठाप्रद उत्सव बने महत्तम॥४॥

(उपक्रम)

भागवतार्थनिबन्धमें उपदिष्ट रीतिके अनुसार श्रीभागवतीय स्कन्ध प्रकरण एवं अध्याय के विभागोंका निरूपण समझनेसे पहले कुछ बातें जान लेनी आवश्यक हैं.

श्रीभागवत महापुराणके अनुसार—

मनुष्यके लिये सबसे श्रेष्ठ धर्म तो वही होता

है कि जिसके कारण अधोक्षज भगवान्‌के बारेमें फलोंकी कामनासे रहित अहैतुकी एवं रोग आदि प्रतिबन्धोंसे रहित अप्रतिहता भक्ति सिद्ध हो पाये. इसके कारण, स्वयं परमात्माकी तरह ही, भगवद्धर्मोंके आवेशवश जीवात्माका अन्तःकरण भी सुप्रसन्न हो पाता है. क्योंकि भगवान् वासुदेवके साथ भक्तियोगके द्वारा जुड़नेपर सहज ही जागतिक विषयोंमें वैराग्य और जगदीशके गुण-धर्म-लीला-में अनुराग प्रकट हो जाता है. अन्यथा भलीभांति धर्मानुष्ठान करनेपर भी भगवत्कथामें यदि रति उत्पन्न न होती हो तो ऐसे धर्मानुष्ठानको निरर्थक श्रम ही केवल समझना चाहिये. क्योंकि मोक्षप्रदायक धर्मपुरुषार्थका प्रयोजन कभी आर्थिक लाभ हो नहीं सकता. धर्मप्रसाधक अर्थपुरुषार्थका प्रयोजन कभी क्षुद्रकामनाओंकी तुष्टिको माना नहीं जा सकता. इसी तरह कामपुरुषार्थका प्रयोजन केवल अपनी इन्द्रियोंको सुखप्रदान करनेमात्रमें परिसीमित कभी माना नहीं जा सकता. क्योंकि स्वयं जीवनका भी प्रयोजन केवल जीवके स्वरूपज्ञानमें परिसीमित किया नहीं जा सकता है. तत्त्ववेत्ताओंके अनुसार परम तत्त्व तो वह अद्वय ज्ञान होता है जिसे 'ब्रह्म' 'परमात्मा' और 'भगवान्' कहा जाता है. मुनिगण ऐसे उस तत्त्वमें श्रद्धा रखते होनेके कारण श्रुतिगृहीत भक्तिद्वारा उस तत्त्वको अपनी आत्माके भीतर विद्यमान आत्माके रूपमें ही निहारते हैं. अतः वर्णाश्रमके विभाजनके अनुसार साधारण पुरुषोंकी

तुलनामें जैसे द्विजोंको श्रेष्ठ माना गया है, वैसे ही धर्मोंका भी भलीभांति अनुष्ठान करना, अन्ततः तो आत्मा और परमात्मा दोनोंको सन्तुष्ट करनेवाला हो तभी श्रेष्ठ माना जाना चाहिये. अतः यहां-वहां भटकनेके कारण अपना मन व्यग्र न हो पाये इस तरह सात्त्वत भक्तोंके नाथ भगवान्के बारेमें श्रवण-वाणी रूप बाह्येन्द्रियों द्वारा श्रवण (अर्थात् भगवान्के वाचक पद और वाक्यों द्वारा भगवान्का कैसे स्वरूप निर्धारित होता उसे सुनना) और कीर्तन (भगवान्के वैसे स्वरूपके निर्धारक वचनोंको पुनः-पुनः आवर्तन) करना चाहिये. इसी तरह आन्तर-इन्द्रियोंद्वारा ध्यान (चित्तको सुस्थिर बनाना अथवा भगवत्स्वरूप या भगवन्मूर्ति का अनुसन्धान) करना चाहिये. अन्ततः बाह्याभ्यन्तर दोनों तरह भगवान्का पूजन सदा करते रहनें चाहिये. यही प्रमुख धर्म है.

(द्रष्ट. : भाग.पुरा.१।२।५-१४).

इन भागवतीय वचनोंके आधारपर इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि श्रवण-कीर्तन आदिके विषय भगवान् होने आवश्यक हैं. क्योंकि साक्षात् तो भगवान्को सुना नहीं जा सकता फिरभी भगवद्वाचक शब्दोंको तो सुना ही जा सकता है. क्योंकि भगवान् और भगवान्की लीला का आपसी सम्बन्ध सूर्य और उसके रश्मि-प्रकाश की तरह अन्योन्यात्मक ही होता है. अतः वैसे शब्दोंका श्रवण भी भगवान्का ही श्रवण सिद्ध होता है. भगवान्की लीला सर्ग विसर्ग स्थान पोषण ऊति मन्वन्तर ईशानुकथा निरोध मुक्ति और आश्रय यो दशधा वर्णित हुयी

हैं. अतः दशविधलीलाओंके साथ लीलाकर्ताके रूपमें भगवान्के श्रवण आदि करने चाहिये. इन लीलाओंके श्रवण आदिमें अधिकारी होना भी अपेक्षित है. अतः पहले अधिकार और साधन के निरूपणके बाद तृतीय स्कन्धसे आरम्भ कर बारहवें स्कन्ध तक दशविध लीलाओंका निरूपण किया गया है.

इन लीलाओंके श्रवण आदिके अंगतया अधिकार तथा साधनों का निरूपण क्रमशः प्रथम तथा द्वितीय स्कन्धोंमें किया गया है.

(प्रथमस्कन्धके तीन प्रकरण)

श्रीभागवतके श्रवणका अधिकार [क]हीन [ख]मध्यम तथा [ग]उत्तम यों तीन प्रकारोंमें सम्भव है. अतः प्रथम स्कन्धमें यथायथ तीन प्रकरण हैं.

(१-३ यों तीन अध्यायोंवाला प्रथम [क]प्राथमिक या हीन अधिकारका द्योतक प्रकरण)

श्रीभागवतके श्रवणार्थ प्राथमिक या हीन अधिकारके रूपमें अर्थात् न्यूनतम योग्यता श्रोताकी १.जिज्ञासुता २.अमात्सर्य और ३.श्रवणादर माने गये हैं. श्रीभागवतकीर्तनार्थ वक्ताके योग्य अधिकारी होनेके गुणोंके रूपमें १.स्वयं भागवतके तत्त्वको सम्प्रदायके अनुसार भलीभांति सुन कर समझनेवाला, २.चतुर और ३.गूढ़ अर्थोंको जाननेवाला होना माना गया है. अतः इन तीन-तीन गुणोंके अनुसार तीन अध्याय इस प्रकरणमें योजित हुवे हैं.

इस हीनाधिकारके प्रकरणके प्रथमाध्यायमें प्रश्नकर्ताके रूपमें श्रोताके जिज्ञासु होनेका गुण. इसी तरह वक्ताके द्वारा उसने कैसे अधिकारी वक्ताके मुखसे श्रीभागवत सुनी यों सम्प्रदायके वर्णनद्वारा अपने योग्य अधिकारी होना सूचित किया गया.

इस हीनाधिकारके प्रकरणके द्वितीयाध्यायमें कर्म एव ज्ञान के बारेमें तथा भगवदवतारके प्रयोजन एवं लीला के बारेमें प्रश्न किया गया होनेसे श्रोताके भीतर मात्सर्य नहीं है, यह सूचित हुवा. इसी तरह इन जिज्ञासाओंका समाधान कर पाये वक्ताका ऐसा चातुर्य निरूपित किया गया है.

इस हीनाधिकारके प्रकरणके तृतीयाध्यायमें रूपात्मक भगवान्के अवतारोंका निरूपण किया गया होनेसे श्रोताका श्रवणरूप साधनमें आदरभाव तथा वक्तामें वह गूढ़ रहस्योंको जानता होनेकी योग्यता दिखलायी गयी है.

यों श्रोता और वक्ता दोनोंके हीन या प्राथमिक अधिकारका यहां द्योतन हुवा है.

(४-६ तीन अध्यायोंवाला द्वितीय ^ख मध्यमाधिकारका द्योतक प्रकरण)

इसी तरह मध्यमाधिकारके अन्तर्गत १.भगवत्कृपा २.भगवदीयता और ३.भगवदेकाग्रता रूपी तीन गुण श्रोता एवं वक्ता के भीतर अपेक्षित होते हैं. तदनुसार ही तीन अध्याय यहां भी योजित हुवे हैं.

मध्यमाधिकारके प्रकरणके प्रथमाध्यायमें प्रस्तुत कथाकी प्रेरणाके हेतुभूत प्रसंगके निरूपणमें महर्षि वेदव्यासजीके भीतर भगवान्के द्वारा विचारित भगवदीयताका वर्णन किया गया है.

मध्यमाधिकारके प्रकरणके द्वितीयाध्यायमें प्रश्नोंके उत्तर तथा कृति का निरूपण किया गया है. यों महर्षि वेदव्यास और देवर्षि नारद की कथारूपा साधनामें अपेक्षित भगवान्के द्वारा सम्पादित शरीरवाले होनेके निरूपण द्वारा उनका भगवदीय होना प्रतिपादित किया गया है.

मध्यमाधिकारके प्रकरणके तृतीयाध्यायमें फलके निरूपणार्थ देवर्षि नारदकी भगवदीयता निरूपित की गयी है.

यों तीन अध्यायोंमें मध्यमाधिकारी यहां वर्णनीय माना गया है.

(७-१९ यों तेरह अध्यायोंवाला तृतीय ^ग उत्तमाधिकारका द्योतक प्रकरण)

उत्तमाधिकारमें तो चित्तकी भगवदेकतानताकी, अर्थात् भगवान्के अलावा अन्य विषयोंमें दृढ़ वैराग्यकी, अपेक्षा रहती है. इसी तरह क्योंकि पुरुषको द्वादशांग माना गया है; अतः, क्षरपुरुषसे अतीत और अक्षरपुरुषसे उत्तम ऐसे पुरुषोत्तम भगवान् ही भागवतके प्रमुखतया प्रतिपाद्य विषय हैं, यह जतानेको १३ अध्यायोंमें उत्तमाधिकारका निरूपण किया गया है.

उत्तमाधिकारके प्रकरणके अन्तर्गत प्रथम, अर्थात् स्कन्धकी दृष्टिसे सातवें, अध्यायमें वर्णनीय उत्तमाधिकारी महाराजा परीक्षितके भीतर पुरुषपरम्परासे संभावित भी किसी तरहके दोषोंके न होनेकी कथाद्वारा उनका उत्तमाधिकारी होना दिखलाया गया है.

उत्तमाधिकारके प्रकरणके अन्तर्गत द्वितीय, स्कन्धादितया आठवें, अध्यायमें कुन्तीद्वारा की गयी भगवान्की स्तुतिका निरूपण किया गया है. एतावता ब्रह्मके स्वरूपके अज्ञानवश होनेवाले दुःखकी भगवान्की कृपाके कारण होती निवृत्ति तथा स्त्रीपरम्परावश भी महाराजा परीक्षितके उत्तम श्रोता होनेका निरूपण अभिप्रेत माना गया है.

उत्तमाधिकारके प्रकरणके अन्तर्गत तृतीय, स्कन्धादितया नौमें, अध्यायमें युधिष्ठिरको भीष्मद्वारा दिया गया उपदेश वर्णित हुवा है. यह जीवके स्वरूपके बारेमें अज्ञानसे जो दुःख हो सकते हैं, उन्हें परम कृपालु भगवान्द्वारा निवृत्त किया जाना वर्णित हुवा है. अतः श्रोताके अन्नदाताके रूपमें जो पोषक हो उसकी दृष्टिसे भी श्रोताकी उत्तमता या निर्दोषतः समझायी गयी है.

इस प्रकरणके अन्तर्गत चतुर्थ, अर्थात् स्कन्धादिसे दसवें, अध्यायमें इस प्रकरणके प्रमुख श्रोताके सगे-सम्बन्धी भीम आदिकी भगवत्परताके वर्णनद्वारा सांसर्गिक दोषोंसे भी रहित होना प्रमुख

श्रोता, महाराज परीक्षित, का सूचित किया गया है.

इस प्रकरणके पांचवें, अर्थात् स्कन्धादि ग्यारहवें, अध्यायमें भगवान्के लीलाकार्यके सम्पन्न हो जानेके कारण भगवान्की सुखस्थिति और उसके कारण पार्थको भी भगवत्सुखके कारण सुखी दिखलानेके कारण आगन्तुक दोषोंका अभाव भी प्रकरणके प्रमुख श्रोताके सन्दर्भमें सूचित किया गया है.

उत्तमाधिकारके इस प्रकरणके अन्तर्गत छट्ठे, अर्थात् स्कन्धादिसे बारहवें, अध्यायमें भगववान्के द्वारा रक्षित पुत्रके प्राप्त होनेसे पार्थकी सविशेष सुखसम्पत्ति वर्णित हुयी है.

इस सातवें, अर्थात् तेरहवें, अध्यायमें धृतराष्ट्रकी मुक्तिके वर्णनद्वारा बीजमुक्तिद्वारा दोषोंकी निवृत्ति निरूपित हुयी है.

इस आठवें, अर्थात् चौदहवें, अध्यायमें बीजमुक्तिके कार्यतया पाण्डवोंके भी वैराग्यके वर्णनद्वारा प्राकरणिक श्रोताकी उत्तमताका ही निरूपण अभिप्रेत है.

इस नौमें, अर्थात् पंदरहवें, अध्यायमें वैराग्यके सांसारिक सुखोंसे विरक्त हो जानेके कारण पाण्डवोंकी मुक्ति निरूपित हुयी है. एतावता प्रकरणके प्रमुख श्रोताके भीतर पूर्वजोंके कृत कर्मोंका भी किसी तरहका प्रतिबन्ध नहीं बच गया यह दिखाना अभिप्रेत है.

इस दसवें, अर्थात् सोलहवें, अध्यायमें प्रकरणोपात्त प्रमुख श्रोताके राज्यनिरूपणद्वारा लौकिक सामर्थ्यका निरूपण अभिप्रेत है.

इस ग्यारहवें, अर्थात् सत्रहवें, अध्यायमें धरणी और धर्म के हेतु कलियुगके निग्रहार्थ अपेक्षित अलौकिक सामर्थ्य प्रमुख श्रोतामें कितनी अधिक है, यह दिखलायी गयी है.

इस बारहवें, अर्थात् अट्ठारहवें, अध्यायमें राज्यादिके त्यागके वर्णनार्थ त्यागके हेतुभूत वैराग्य और उस वैराग्यके हेतुभूत ऋषिपुत्रद्वारा दिये शापका निरूपण किया गया है.

इस तेरहवें, अर्थात् उन्नीसवें, अध्यायमें त्यागनिरूपणके प्रसंगमें त्याग और सत्संग के लाभ होनेपर प्रमुख श्रोताके द्वारा पूछे गये प्रश्न जो उसकी प्रमुख अधिकारिता सिद्ध करते हैं, उनका वर्णन किया गया है.

इस तरह प्रथम स्कन्ध १९ अध्यायोंवाले तीन प्रकरणोंवाला स्कन्ध है.

ooooo+ooooo

(द्वितीयस्कन्धके तीन प्रकरण)

साधनके निरूपणार्थ जो द्वितीय स्कन्ध है उसमें भी

तीन ही प्रकरण हैं : [क] तत्त्वध्यान [ख] हृदयके भीतर सहज प्रसन्नताका मनोभाव तथा [ग] मनन.

(१-२ दो अध्यायोंवाला प्रथम [क] तत्त्वध्यान का निरूपक प्रकरण)

तत्त्व स्वयं स्थूल और सूक्ष्म के प्रभेदवश दो तरहसे प्रतिपादित हुवा है. अतः तत्त्वध्यानार्थतया दो अध्याय इस प्रकरणमें समायोजित हैं.

द्वितीय स्कन्धके तत्त्वध्यानके प्रकरणके अन्तर्गत प्रथम अध्यायमें स्थूलस्वरूपका ध्यान वर्णित हुवा है. इसी तरह द्वितीय अध्यायमें सूक्ष्मस्वरूपका ध्यान वर्णित हुवा है.

(३-४ दो अध्यायोंवाला द्वितीय [ख] हृदयके भीतर सहज प्रसन्नताका मनोभावका निरूपक प्रकरण)

साधकके भीतर श्रद्धा हो तो साधनानुष्ठानमें उसे हृदयके भीतर सहज प्रसन्नताके मनोभाव प्रकट होते हैं. यह श्रवणसाधना हो या कीर्तनसाधना दोनोंके बारेमें समानरूपेण अभिप्रेत तथ्य है. अतः इस प्रकरणमें भी दो अध्याय योजित हुवे हैं.

द्वितीय स्कन्धके अन्तर्गत तीसरे अध्यायमें वर्णनीय हृत्प्रसादके रूपमें श्रोताकी श्रद्धाका निरूपण अभिलषित है. इसी तरह वक्ताकी श्रद्धाके निरूपणार्थ चतुर्थाध्याय है.

(५-१० छह अध्यायोंवाला तृतीय [ग] मननरूप साधनका निरूपक

मनन दो तरहसे सम्भव है : जगत् या जगत्के आधिभौतिक आध्यात्मिक आधिदैविक रूप कैसे उत्पन्न हुवे इस बातके विचार करनेके रूपमें मनन करना. अथवा ये उपपन्न कैसे हो सकते हैं? इस तरहका मनन करना.

उत्पत्तिके बारेमें मनन :

इसके अन्तर्गत इस सृष्टिमें १.जो अनित्य नाम-रूप-कर्मोवाले पदार्थ दिखलायी देते हैं, उन्हें उत्पन्न हुवा माना जाता है. २.इस सृष्टिमें जो पदार्थ नित्य अर्थात् किसी कालविशेषमें प्रतिनियत कोई एक नाम; या कोई एक रूप; अथवा किसी एक कर्म की इयत्तामें परिसीमित न होनेपर भी देशमें परिच्छिन्न दिखलायी देते हों वे उत्पन्न होते नहीं परन्तु तत्तद् देश-कालमें आवागमन करते माने जाते हैं. यह आवागमन ही उनका जननतया लगता है. ३.जो पदार्थ देश-कालमें परिच्छिन्न न माने जा सकते हों, उनकी न तो उत्पत्ति होती है और न आवागमन ही. वे तो कहीं-कभी किसी रूपमें प्रकट होते हैं अथवा अप्रकट रहते हैं. यह प्राकट्य ही उनका जननके रूपमें स्वीकारा जाता है.

उत्पत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत पांचवें अध्यायमें चौदह लोकोंकी रचनाके हेतु अनित्य महद् अहंकार मन पंचतन्मात्रा पांच ज्ञानेन्द्रिय पांच कर्मेन्द्रिय तथा पांच महाभूत जो ब्रह्माण्डकी उत्पत्तिमें कारणभूत तत्त्व माने गये हैं उनके जननका निरूपण

है.

उत्पत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत छट्ठे अध्यायमें सनातन जीवात्मा जो कालतः तो अपरिच्छिन्न होनेपर भी अणुपरिमाण होनेके कारण और देशतः परिच्छिन्न होनेके कारण जिनका ब्रह्माण्डमें आवागमनरूप जनन होता है. यहीं ऋग्वेदीय पुरुषसूक्तमें प्रतिपाद्य निरूपणका भी अनुवाद मिलता होनेसे जीवात्माओंके लिये भगवद्भजन सर्वफलोंका साधक होता है, यह सूचित किया गया है.

उत्पत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत सातवें अध्यायमें भगवान्का मूलस्वरूपमें भजन सिद्ध हो पाये तदर्थ भगवान्के देश-काल दोनोंमें अपरिच्छिन्न होनेके कारण भगवान्का प्राकट्यरूप जनन वर्णनीय माना गया है.

उपपत्तिके बारेमें मनन :

उपपत्तिके हेतु मननके भी तीन अंग दिखलाये गये हैं : १.आशंका २.उत्तर एवं ३.फल. अतः एतदर्थ भी तीन अध्याय समायोजित हुवे हैं.

उपपत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत आठवें अध्यायमें जो अभी तक प्रतिपादित किया गया, अर्थात् जीवात्मा या परमात्मा का अचेतन देहोंके साथ सम्बन्ध उपपन्न कैसे हो सकता है? ऐसी आशंका निरूपित हुयी है.

उपपत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत नौमें अध्यायमें जीवात्मा या परमात्मा का देहसे सम्बन्ध कैसे जुड़ सकता है, ऐसी आशंकाका परिहार अर्थात् उत्तर निरूपित किया गया है.

उपपत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत दसवें अध्यायमें इन आशंका-परिहारोंद्वारा फलित होते निष्कर्ष श्रीभागवत-कथाका श्रवण अवश्य करना चाहिये, ऐसा प्रतिपादित हुवा.

यों दो-दो अध्यायोंवाले प्रथम-द्वितीय प्रकरण तथा छह अध्यायोंवाला अन्तिम तृतीय प्रकरण, कुल मिला कर, दस अध्यायोंमें द्वितीय स्कन्धके अन्तर्गत साधनका निरूपण किया गया है.

ooooo+ooooo

(तृतीयस्कन्ध)

प्रथम स्कन्धमें उत्तम मध्यम तथा आदिम प्रकारके श्रवणाधिकार और द्वितीय स्कन्धमें तत्त्वध्यान हृत्प्रसाद और मनन रूप तीन साधनोंके निरूपणके बाद अब इस स्कन्धमें भगवान्‌की दस लीलाओंमेंसे प्रथम सर्गरूपा लीलाका निरूपण अभिप्रेत है. लौकिक सर्ग और अलौकिक सर्ग दोनों ही तैंतीस तरहके दिखलाये गये हैं. जैसे कि बृहदारण्यकोपनिषद्‌के **"देवता कितने होते हैं? आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, यों इकत्तीसके**

बाद बत्तीसवां इन्द्र और तैंतीसवां प्रजापति" (बृह.उप.३।९।१-२) इस वचनके अनुसार स्पष्ट है. इसी तरह अट्ठाईस तत्त्व, चार तरहके उद्‌भिज्ज अण्डज जरायुज और स्वेदज यों चार तरहके भूतबीज की गणना करनेपर ३२ और ३३ वां काल यों लौकिक सर्ग भी तैंतीस तरहका माना गया है. अतः लौकिकालौकिक अथवा बन्धमोक्ष के प्रभेदवश दो प्रकरणोंमें और तैंतीस अध्यायोंवाला यह स्कन्ध है.

(प्रकारान्तर)

[१] गुणातीतसृष्टि, [२] सगुणसृष्टि, [३] कालसृष्टि, [४] जीवसृष्टि और [५] तत्त्वसृष्टि यों पांचों तरहकी सृष्टिके अन्तर्गत एक प्रकार मोक्षार्थ सृष्टिका और दूसरा प्रकार बन्धार्थ सृष्टिका यों कुल मिला कर दस प्रकरणोंवाला भी स्कन्ध माना जाता है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १-२-३-४-५-६ अध्यायोंवाला प्रथम गुणातीतसृष्टिका प्रकरण)

इस प्रथम प्रकरणमें प्रथम अध्याय गुणातीत तत्त्वके वर्णनार्थ है. इसमें अधिकारके प्रसंगवश प्रतिबन्धकी निवृत्ति तीर्थसेवन सत्संगप्रीति भगवान्‌के बारेमें प्रश्नात्मिका उत्कण्ठा या जिज्ञासा के रूपमें बाह्यशुद्धि निरूपित हुयी है. दूसरा अध्याय गुणातीत कार्यके वर्णनार्थ है. इसमें भगवत्कथाके श्रवणवशात् शास्त्रीय रीतिके अनुसार भगवान्‌के माहात्म्यका ज्ञान हुवा वह आभ्यन्तर शुद्धिका निरूपण है. तीसरा अध्याय प्रतिबन्धनिवृत्तिद्वारा उत्तमोत्तमाधिकाररूप श्रवणाधिकारके वर्णनार्थ है. इसमें केवल भगवच्चरित्रके श्रवणके कारण आन्तरिक ज्ञानरूप भगवद्‌गुणोंका

प्रकट होना प्रतिपादित हुवा है. चौथा अध्याय उक्त अधिकारीकी शुद्धिके वर्णनार्थ है. इसमें भगवान्के प्रयाणके समय विद्यमान अधिकारी उद्धवकी तरह अविद्यमान विदुर पर भी यों दोनोंपर भगवान्के प्रसादका वर्णन अभिप्रेत है. पांचवां अध्याय तीर्थाटनरूप उसके अधिकारानुरूप साधनके निरूपणार्थ है. इसमें ब्रह्माण्डके कारणीभूत महद् आदि तत्त्वोंकी उत्पत्तिका निरूपण स्तुतिद्वारा किया गया है. छट्ठा अध्याय उस उत्तमोत्तमाधिकारीकी श्रवणासक्तिके निरूपणार्थ है. इसमें महद् आदि तत्त्वोंके कार्यभूत ब्रह्माण्डरूप शरीरकी उत्पत्तिके वर्णन करनेवालोंके कर्मका निरूपण किया गया है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ ७-८-९ अध्यायोंवाला द्वितीय सगुणसृष्टिका प्रकरण)

प्रकृतिके तीन, सात्त्विक राजस एवं तामस, गुणोंके कारण सगुणसृष्टिका भी निरूपण तीन प्रकारसे इन अध्यायोंमें यहां करना अभिप्रेत माना गया है. इस सगुणसृष्टिके निरूपणके प्रकरणके प्रथम अर्थात् आदितः सातवें अध्यायमें शंका-समाधानके रूपमें मतान्तरके आधारपर सृष्टि और भगवान् के बीचमें गुणोंके प्रवेशका वर्णन किया गया है. द्वितीय अर्थात् आदितः आठवें अध्यायमें चतुर्मुख ब्रह्माजीको जो उनके हृदयमें जगत्कारणरूप भगवान्के दर्शन हुवे उसके कारण वे सृष्टिकर्ता बनें ऐसा समझाया गया है. तृतीय अर्थात् आदितः नौवें अध्यायमें जो सृष्टि अवश्यंभावी है उसकी उत्पत्ति सफलतया हो पाये तदर्थ ब्रह्माजी द्वारा की गयी स्तुतिका वर्णन है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १०-११ अध्यायोंवाला तृतीय कालसृष्टिका प्रकरण)

इस कालसृष्टिके प्रकरणमें, क्योंकि, कालके स्थूल और सूक्ष्म यों दो प्रभेद होते हैं अतः दो अध्यायोंमें वर्णन अभिलषित है.

इस कालसृष्टिके प्रकरणके पहले अर्थात् आदितः दसवें अध्यायमें दशविध सर्गरूप कार्यके रूपमें कालजन्मका वर्णन हुवा है. दूसरे अर्थात् आदितः ग्यारहवें अध्यायमें कालकी परमाणुसे लेकर परार्ध संख्याकी उपाधिवाले कालके जन्मका निरूपण अभिप्रेत है.

अमुक्त जीव कालके आधीन ही रहते होनेसे उनका निरूपण कालसृष्टिके वर्णनके अन्तर्गत ही यहां कर दिया गया है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १२ वें अध्यायवाला चतुर्थ मुक्तजीवकी सृष्टिका प्रकरण)

इस चौथे प्रकरणमें मुक्तजीवकी सृष्टिका वर्णन एक ही अध्यायमें किया गया है. इस बारहवें अध्यायमें लोकातीत लौकिकमुक्तजीवकी सृष्टिका निरूपण और इसी तरह इनके अंगरूपेण नामसृष्टिके प्राकट्यका निरूपण अभिप्रेत है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १३-१४-१५-१६-१७-१८-

१९ यों कुल सात अध्यायोंवाला पांचवां प्रकरण)

मुक्ति, क्योंकि, बन्धसे मुक्ति होनेके अर्थमें अपेक्षित है. अतः इस बन्धसृष्टिके प्रकरणमें प्रथम अर्थात् तेरहवें अध्यायसे लेकर उन्नीसवें अध्याय तक पांच अवान्तर प्रकरणोंमें बन्धसृष्टिका वर्णन किया गया है. इसके प्रथम अर्थात् आदितः तेरहवें अध्यायमें सारे तत्त्वोंकी आधारभूत भूमिके उद्धारार्थ वराहकल्पके निरूपण द्वारा मुक्तजीवोंकी सृष्टिमें उपपत्तिका निरूपण किया गया है.

अग्रिम छह अध्यायोंमें विस्तारपूर्वक जन्म-मरणात्मक संसारका निरूपण अभिप्रेत है.

तदनुसार दूसरे अर्थात् आदितः चौदहवें अध्यायमें मुक्तजीवोंकी सृष्टिकी उपपत्तिके प्रयोजनवश सन्ध्याकालमें कामके द्वारा आसुरी बीजके जननका वर्णन किया गया है.

अतएव इस उपपत्तिके अंगतया तीसरे अर्थात् आदितः पंदरहवें अध्यायमें ब्रह्मशापवश वैकुण्ठस्थित पार्षदोंका आसुरबीजमें समागमन प्रतिपादित हुवा है.

चौथे अर्थात् आदितः सोलहवें अध्यायमें भगवान्‌द्वारा शाप प्रदान करनेवालेको सान्त्वनाप्रदान और अपने पार्षद जय-विजयके भीतर भगवद्विभूतिके आवेशका निरूपण अभिप्रेत है.

उपपत्तिनिरूपणके अंगतया पांचवें अर्थात् आदितः सत्रहवें अध्यायमें सृष्टिमें अतिशयित उत्कर्ष नाशका बीज बनता है यह दिखाना अभिप्रेत है.

इस उपपत्तिके प्रसंगवश छठे अर्थात् आदितः अट्ठारहवें अध्यायमें दैत्यका भगवान्‌के साथ जो युद्ध हुवा उसकी विनाशकथा वर्णित हुयी है.

इसी उपपत्तिके निरूपणार्थ इस सातवें अर्थात् आदितः उन्नीसवें अध्यायमें दैत्यनाशनकी कथा पूर्ण हुयी.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २०-२१-२२-२३-२४ अध्यायोंवाला छट्ठा तत्त्वमुक्तिका प्रकरण)

इस प्रकरणमें प्रथम अर्थात् २० वें अध्यायमें अग्रिम चार अध्यायोंमें क्योंकि पुरुषकी मुक्तिका निरूपण अभिप्रेत होनेसे मुक्तसृष्टिके उपक्रमार्थ योजित है. शेष चार अध्यायोंमें पुरुषकी मुक्तिके निरूपण द्वारा ही, पुरुषद्वारा त्यक्त तत्त्व पुनः अपरिगृहीत स्वस्वरूपमें अवस्थित हो जाते होनेसे तत्त्वमुक्तिका निरूपण भी द्योतित हो गया है.

यहां प्रथम अर्थात् आदितः बीसवें अध्यायमें सात्त्विक राजस और तामस के इतरेतरगुणित नौ प्रकार सगुणावस्थाके और दसमी निर्गुणावस्थाके प्रभेदके अनुसार भगवच्चिन्तनमें भी सगुण और निर्गुण यों दो तरहके स्वभाव प्रकट होते हैं.

इसके आधारपर मोक्ष उपपन्न होता होनेसे मुक्तसृष्टि भी उपपन्न होती है.

द्वितीय अर्थात् आदितः इक्कीसवें अध्यायमें मोक्षसृष्टिके प्रकरणके अन्तर्गत तत्त्वमुक्तिके अवान्तरप्रकरणमें भोगसहित मोक्षके वर्णनके प्रसंगमें कर्दम और मनु की धर्मसिद्धियोंका निरूपण किया गया है.

तृतीय अर्थात् आदितः बाईसवें अध्यायमें भोगसहित मोक्षके निरूपणतया ऐहिक-आमुष्मिक उत्कर्षवाले मनुके कन्यालाभ और कर्दमके अर्थलाभ का निरूपण किया गया है.

चौथे अर्थात् आदितः तेवीसवें अध्यायमें कर्दमकी भोगसहित मुक्तिके वर्णनके अन्तर्गत कामनाओंकी पूर्तिकी कथा वर्णित हुयी है.

पांचवें अर्थात् आदितः चौवीसवें अध्यायमें कर्दम ऋषिके सांख्यके फलरूप मोक्षकी प्राप्तिका निरूपण किया गया है. अर्थात् सांख्यकी प्रक्रियाद्वारा पुरुषके प्राकृत गुणोंसे मुक्त होनेपर प्राकृत तत्त्व वैराग्यवश छूट जाते होनेसे उन तत्त्वोंकी मुक्ति हो जाती है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २५ वें अध्यायवाला सातवां कालमुक्तिका प्रकरण)

जो गुणातीत या भगवदधीन होते हैं उनकी मुक्ति तो भक्तिरूपा ही मानी जाती होनेके कारण इस प्रकरणमें मुख्या भक्तिका निरूपण किया गया है. यह पुनः कालमुक्तिके रूपमें अभिप्रेत है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २६-२७ अध्यायोंवाला आठवां गुणातीतमुक्तिका प्रकरण)

इस प्रकरणके दो अध्यायोंमें अज्ञाननिवृत्तिरूप ज्ञानका निरूपण अभिलषित है. यह गुणातीतमुक्तिलीलाका प्रकरण है.

यहां प्रथम अर्थात् आदितः छब्बीसवें अध्यायमें सांख्यशास्त्रके उत्पत्ति तथा उपपत्ति दोनोंके आधारपर अप्राकृत आत्माकी भिन्नताके निरूपण द्वारा गुणातीत आत्माकी मुक्तिका वर्णन किया गया है.

यहां इस द्वितीय अर्थात् आदितः सत्तावीसवें अध्यायमें सांख्यशास्त्रके आधारपर ज्ञान और उसके साधनतया उपपत्तियोंका निरूपण किया गया है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २८ वें अध्यायवाला नौवां सगुणमुक्तिका प्रकरण)

इस प्रकरणके अन्तर्गत एक अध्यायमें योगका निरूपण किया गया है. यह सगुणोंकी मुक्तिलीलाके रूपमें है. क्योंकि सगुणसृष्टि तत्तद् भावोंके साथ निर्मित हुयी होती है. अतः

उनकी भीति उनके वैसे भावोंसे मुक्त होनेपर और स्वयं अपने स्वरूपमें अवस्थित होनेपर होती है. यह जबतक चित्तवृत्तिओंका निरोध न हो तबतक शक्य न होनेके कारण योगसाधनाके निरूपणद्वारा मुक्तिलीलाका निरूपण यहां अभिलषित माना गया है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २९-३०-३१-३२-३३ अध्यायोंवाला दसवां जीवमुक्तिका प्रकरण)

इस प्रकरणके प्रथम अर्थात् २९वें अध्यायमें योगकी अंगभूता भक्तिका निरूपण अभिप्रेत है. अग्रिम दो अर्थात् ३०-३१ अध्यायोंमें वैराग्यका निरूपण अभिलषित है. एतवता जीवकी मुक्तिलीलाका यह प्रकरण फलित होता है. अवशिष्ट दो अर्थात् ३२-३३ अध्यायोंमें स्त्रीमुक्तिका वर्णन अभिप्रेत है.

यहां प्रथम अर्थात् आदितः उनत्तीसवें अध्यायमें मोक्षसृष्टिके प्रकरणमें जीवमुक्तिके प्रसंगवश सभीका साधन बन पाये ऐसी चार प्रकारकी भक्ति और वैराग्य के अंगतया भयंकर कालके माहात्म्यका निरूपण किया गया है.

द्वितीय अर्थात् आदितः तीसवें अध्यायमें संसारमें भयवश प्रकटे वैराग्यके उद्बोधनार्थ मृत्युरूप दोषका निरूपण किया गया है.

तृतीय अर्थात् आदितः इकत्तीसवें अध्यायमें पूर्वोक्त कालजनित

मृत्युजनित वैराग्यके ही उद्बोधनार्थ पुनर्जन्मरूप दोषका निरूपण अभिप्रेत है.

चौथे अर्थात् आदितः बत्तीसवें अध्यायमें इन्हीं सारी बातोंके उपसंहारार्थ सर्वशेषरूप अन्य भी सारी बातें समझायी गयी हैं.

पांचवें अर्थात् आदितः तैंतीसवें अध्यायमें मुक्तसृष्टिके प्रकरणके अनुरूप सर्गरूप फलके बोधक योगसाधनाद्वारा देवहूतिको मिले मोक्षका निरूपण किया गया है.

इस तरह १९ अध्यायोंवाली बन्धसृष्टि और १४ अध्यायोंवाली मुक्तिसृष्टि यों कुल मिला कर ३३ अध्यायोंवाले दस प्रकरणोंमें तृतीय स्कन्धमें सर्गलीला निरूपित हुयी है.

यहां श्रीशुकदेवजी और मैत्रेय की सर्गनिरूपणकी रीति अलग-अलग होनेसे प्रकरण एवं अध्याय के मूलार्थमें अन्तर पड़ जाता है. अतः मैत्रेयकी निरूपणरीतिके अनुसार सर्गलीलाके अन्तर्गत चार प्रकरण यों हैं : [१]अधिकारप्रकरण, सृष्टिप्रकरण, उपपत्तिप्रकरण और फलप्रकरण.

इनमें जो सृष्टिप्रकरण है वह [२]गुणातीतसृष्टि, [३]सगुणसृष्टि, [४]कालसृष्टि, [५]तत्त्वसृष्टि और [६]जीवसृष्टि रूपी पांच प्रकरणोंवाला है. इसके बाद आनेवाले उपपत्तिके प्रकरणमें [७/क]बन्धसृष्टि

और [७/ख] मोक्षसृष्टि के प्रभेदवश दो तरहके अवान्तरप्रकरण हैं.

फलप्रकरणमें मुक्तिका प्रतिपादन किया गया है. यह मुक्ति [८] भक्ति [९] सांख्य और [१०] योग के तीन प्रभेदवश तीन तरहसे प्रतिपादित हुयी है. इस तरह तृतीयस्कन्ध दस प्रकरणोंवाला मैत्रेयमतके अनुसार प्रतिपादित हुवा है.

इस फलप्रकरणमें भक्तिके अवान्तरप्रकरणके पुनः पुंमुक्ति और सफला मुक्ति यों दो अवान्तरप्रकरण हैं. सांख्यमें अवान्तरप्रकरण नहीं है परन्तु योगप्रकरणके अन्तर्गत पुनः स्वयं योग वैराग्य सर्वनिर्धार और स्वयं मुक्ति रूप चार अवान्तरप्रकरण माने गये हैं.

यों श्रीशुकदेवजीके अभिप्रायके अनुसार स्थूलदृष्टि पांच प्रकरण सूक्ष्मदृष्टि दस प्रकरण बनते हैं. जबकि मैत्रेयजीके अनुसार स्थूलदृष्टि चार प्रकरण और सूक्ष्मदृष्टिसे दस प्रकरण बनते हैं. यह दोनों दृष्टियोंका प्रभेद है.

०००००+०००००

चतुर्थ स्कन्धमें सर्गलीलाके बाद विसर्गलीलाका वर्णन अभिप्रेत है :

(चतुर्थस्कन्ध)

इस विसर्गके अन्तर्गत अलौकिक विसर्ग इकत्तीस देवताओंकी

सृष्टिके निरूपणार्थ होनेसे उसका इकत्तीस अध्यायोंमें निरूपण हुवा है. इनमें बारह आदित्य ग्यारह रुद्र और आठ वसु यों कुल मिला कर इकत्तीस संख्याका जोड़ है. विसर्गलीलाके अन्तर्गत भगवानूका यह माहात्म्य दिखलाना अभिप्रेत है कि विसर्गलीलाके कर्ता भगवानूने इस विसर्गलीलाको पुरुषार्थरूपा बनानेको अर्थात् विसृष्ट जीवात्माओंको चतुर्विध पुरुषार्थ प्रदान करनेका प्रकार भी समायोजित किया है. अतएव चतुर्थ स्कन्ध चार प्रकरणोंद्वारा विर्सगलीलाके वर्णनार्थ है.

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत सात अध्यायोंवाला प्रथम धर्मरूप पुरुषार्थका प्रकरण)

यह विसर्गलीला दक्षकी सोमयज्ञात्मिका धर्मसाधनाके रूपमें वर्णित हुयी है. इस सोमयज्ञात्मिका धर्मसाधनामें सात तरहकी यज्ञसंस्था श्रुति-स्मृति दोनोंके आधारपर स्वीकारी गयी हैं : अग्निष्टोम उक्थ षोडशी अप्तोर्याम अतिरात्र अत्यग्निष्टोम और वाजपेय. अतएव यहां भी सात अध्याय समायोजित हैं.

१.इस प्रकरणके प्रथम अध्यायमें यह वर्णित हुवा है कि कैसे स्वायंभुव मनु और शतरूपा की 'आकूति' 'देवहूति' और 'प्रसूति' नामोंवाली तीन कन्याओंके जन्म हुवा. कैसे आकूतिका प्रजापति रुचिके साथ विवाह हुवा. उनके दाम्पत्यवश जनमनेवाले यज्ञरूपी पुत्रको नाना स्वायंभुव मनुने अपना यथाविधि पुत्र बना लिया. अतः पुत्रीका दक्षिणाका विवाह अपने मामा यज्ञके साथ हुवा. इसी तरह मनुकी तीसरी कन्या प्रसूतिका

विवाह ब्रह्माजीके पुत्र दक्षके हुवा, इस विवाहके द्वारा सोलह कन्याओंका जन्म हुवा. इनमें से श्रद्धा मैत्री दया शान्ति तुष्टि पुष्टि क्रिया उन्नति बुद्धि मेधा तितिक्षा ह्री और मूर्ति नामोंवाली तेरह कन्या धर्मरूपी वरको प्रदान की गयी. शेष तीन कन्या अग्नि पितृगण और भव=महादेवजी को प्रदान की गयी. इनमें से महादेवकी पत्नी दक्षात्मजा सतीके अपमानरूप अनर्थके कारण दक्षयज्ञका रुद्रगणोंद्वारा ध्वंस किये जानेकी कथाका उपक्रम प्रथमाध्यायमें धर्मपुरुषार्थ के प्रकरणके अन्तर्गत किया गया है.

२.धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत द्वितीयाध्यायमें दक्ष ससुर और जमाई श्रीमहादेव के बीच परस्पर वैमनस्यके हेतुभूत प्रसंगकी कथा वर्णित हुयी है.

३.धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत तृतीयाध्यायमें दक्षयज्ञमें आमन्त्रण न दिये जानेपर भी तथा श्रीमहादेवको अनभिप्रेत होनेपर भी दक्षात्मजा सतीके संमिलित होनेकी कथा वर्णित हुयी है.

४.धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत चतुर्थाध्यायमें अपने पिता द्वारा अपने पतिकी निन्दा सुन न पानेके कारण सतीका योगाग्निसे यज्ञमण्डपमें देहोत्सर्गके अनर्थकी कथा निरूपित हुयी है.

५.धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत पांचवें अध्यायमें अनर्थफलतया दक्षयज्ञके रुद्रगण वीरभद्रद्वारा ध्वंस किये जानेके

कारण हुवे युद्धमें देवगणोंकी रुद्रगणोंके हाथों पराजयकी कथा वर्णित हुयी है.

६.धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत छट्ठे अध्यायमें पराजित देवगणोंका ब्रह्माजीके समक्ष अपनी दुर्दशाका विज्ञापन, ब्रह्माजीद्वारा रुद्रानुनयकी प्रेरणा तथा यज्ञानुष्ठानमें रुद्रभागको मान्यता प्रदान करनेका देवगणोंद्वारा निर्णयकी कथा वर्णित हुयी है.

७.धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत सातवें अध्यायमें श्रीहरिके उस यज्ञमें प्रकट होनेपर सभी देव आदि गणोंद्वारा उनकी स्तुतिसे प्रसन्न हो कर भगवान्‌ने उस यज्ञानुष्ठानको परिर्पूण बनाया उसकी कथा निरूपित हुयी है.

इस धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके बाद अर्थपुरुषार्थका पांच अध्यायोंवाला दूसरा प्रकरण प्रारम्भ होता है :

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत पांच अध्यायोंवाला दूसरा अर्थरूप पुरुषार्थका प्रकरण)

विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें प्रथम, अर्थात् , स्कन्धादिसे आठवें अध्यायमें भक्त बालक ध्रुवको [१] साधनतः, अर्थात् , ध्रुव राजकुमारकी अति उग्र तपस्या तथा भगवत्परिचर्या आदि साधनोंका निरूपण किया गया है.

विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें द्वितीय, अर्थात् , स्कन्धादिसे नौवें अध्यायमें [२] साध्यतः, अर्थात् , भगवान्‌का

प्रादुर्भूत हो कर वरप्रदान करना आदि द्वारा सिद्ध होते अर्थपुरुषार्थकी कथा वर्णित हुयी है.

विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें तृतीय, अर्थात्, स्कन्धादिसे दसवें अध्यायमें [३] राज्यके प्रशासनार्थ आवश्यक यक्षादिके वधरूप दोषतः, अर्थात्, ध्रुवके क्रोधावेश युद्ध आदि राजदोषोंका निरूपण हुवा है.

विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें चौथे, अर्थात्, स्कन्धादिसे ग्यारहवें अध्यायमें [४] मनूपदेशके कारण उन दोषोंकी निवृत्ति तथा [५] फलप्राप्तितः अर्थपुरुषार्थसाधनकी कथा वर्णित हुयी है.

विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें पांचवें, अर्थात्, स्कन्धादिसे बारहवें अध्यायमें भक्त ध्रुवको भगवत्पदकी प्राप्तिरूप फलका निरूपण अभिप्रेत है.

इस तरह पांच प्रकारसे अर्थपुरुषार्थकी कथाका वर्णन भी पांच अध्यायोंमें किया गया है. अब तीसरे कामपुरुषार्थकी सिद्धिकी कथा अग्रिम ग्यारह अध्यायोंमें की जानी है :

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत ग्यारह अध्यायोंवाला तीसरा कामरूप पुरुषार्थका प्रकरण)

पांच ज्ञानेन्द्रिय पांच कर्मेन्द्रिय और मन या अन्तःकरण यों ग्यारह प्रकारसे प्रकट होता होनेसे इस प्रकरणमें ग्यारह

अध्याय समायोजित हैं. यहां कामवश पृथुकी कथामें, सर्वकाम और स्वकाम रूपी अवान्तर प्रकरण हैं.

१.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके प्रथम, अर्थात्, स्कन्धादिसे तेरहवें अध्यायमें ध्रुवका वंश और वंशमें जनमें साधु प्रकृतिके राजा अंग और उनके असाधु प्रकृतिवाले पुत्र अत्याचारी वेनके दुर्गणोंसे त्रस्त अंग राजाके राज्यत्यागकी कथाका निरूपण यहां किया गया है.

२.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणमें द्वितीय, अर्थात्, स्कन्धादिसे चौदहवें अध्यायमें प्रजापर वेनके अत्याचार और उससे प्रजाकी रक्षाके हेतु ऋषियोंद्वारा वेनका विनाश और इसके कारण भीतर रक्षक न होनेके कारण पूर्वोक्त हेतुके वश अधर्माभिवृद्धिवश लोकोपद्रवरूप कार्यका वर्णन किया गया है.

३.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके तृतीय, अर्थात्, स्कन्धादिसे पंदरहवें अध्यायमें ब्रह्मर्षियों द्वारा भगवदंशरूप महाराजा पृथुका प्रादुर्भावन और उनके सुप्रशासनके गुणोंके निरूपणकी कथा है.

४.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके चौथे, अर्थात्, स्कन्धादिसे

सोलहवें अध्यायमें महानुभाव राजा पृथुके भीतर भगवदावेशके कारण दिव्य गुणोंके निरूपणकी कथा है.

५.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके पांचवें, अर्थात्, स्कन्धादिसे सतरहवें अध्यायमें महाराजा पृथुका भूमिको डरानेके हेतु शरःसन्धान और भूमिद्वारा महाराजा पृथुकी स्तुतिकी कथा प्रतिपादित हुयी है.

६.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके छट्ठे, अर्थात्, स्कन्धादिसे अट्ठारहवें अध्यायमें महाराजा पृथुद्वारा भूमिके भलीभांति दोहनसे पुनः उर्वरा बनी पृथ्वीपर व्रजघोष ग्राम पुर पत्तन दुर्ग आदिके संविधानद्वारा सभीकी कामनापूर्तिकी कथा वर्णित हुयी है.

७.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके सातवें, अर्थात्, स्कन्धादिसे उन्नीसवें अध्यायमें महाराजा पृथुद्वारा सौ अश्वमेध यज्ञोंके अनुष्ठानरूपा शुद्धिकी कथा निरूपित हुयी है.

८.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके आठवें, अर्थात्, स्कन्धादिसे बीसवें अध्यायमें महाराजा पृथुपर भगवत्प्रसादकी कथा वर्णित हुयी है.

९.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत

स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके नौवें, अर्थात्, स्कन्धादिसे इक्कीसवें अध्यायमें यज्ञकी रक्षारूप स्वधर्म उपदेशकी कथा है.

१०.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके दसवें, अर्थात्, स्कन्धादिसे बाईसवें अध्यायमें पृथु और सनत्कुमार के संवाद और महाराजा पृथुपर दिव्य प्रसाद और ज्ञान की कथा वर्णित हुयी है.

११.विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके ग्यारहवें, अर्थात्, स्कन्धादिसे तेईसवें अध्यायमें महाराजा पृथुके वानप्रस्थाश्रममें प्रवेश करनेको राजभारका त्याग तथा वनमें उग्र तपस्याद्वारा अन्तमें ब्रह्मभावके लाभकी कथा.

इस तरह ग्यारह अध्यायोंद्वारा कामपुरुषार्थके सिद्धिकी कथाके बाद अब मोक्षरूप पुरुषार्थके सिद्धिकी कथा आठ अध्यायोंमें की जानी है :

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत आठ अध्यायोंवाला चौथा मोक्षरूप पुरुषार्थका प्रकरण)

मोक्षके, क्योंकि यहां, दो स्वरूप प्रमुखतया वर्णनीय हैं : [क]ब्रह्मभाव तथा [ख]सायुज्य, अतः दो प्रकरण हैं.

[क]इनके अन्तर्गत ब्रह्मभाव वैराग्य सांख्य योग तप तथा भक्ति रूपा पंचपर्वा विद्याके कारण सिद्ध होता है, अतः

इस ब्रह्मभावके प्रकरणमें पांच अध्यायोंको समायोजित किया गया है. ऐसे मोक्षकी सिद्धि प्राचीनबर्हिषद प्रचेतसोंको हुयी थी.

[क/१] विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अवान्तर सायुज्य प्रकरणवाले प्रथम, अर्थात् आदितः चौवीसवें, अध्यायमें रुद्रगीत स्तोत्रात्मक सायुज्यमुक्तिका साधन निरूपित किया गया है.

[क/२] विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अवान्तर ब्रह्मभाव प्रकरणवाले द्वितीय, अर्थात् आदितः पच्चीसवें, जाग्रदवस्थाद्वारा सर्ववस्तुओंके विवेकका निरूपण करनेवाले अध्यायमें जीवकी संसारमार्गमें गतिकी सामग्रियोंका वर्णन है.

[क/३] विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अवान्तर ब्रह्मभाव प्रकरणवाले तृतीय, अर्थात् आदितः छब्बीसवें, अध्यायमें स्वप्नावस्थामें सर्ववस्तुओंके विवेकके प्रतिपादनद्वारा संसारमार्गमें गमनकी सामग्रियोंका वर्णन किया गया है.

[क/४] विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अवान्तर ब्रह्मभाव प्रकरणवाले चतुर्थ, अर्थात् आदितः सत्ताईसवें, अध्यायमें सभी नश्वर वस्तुओंके विवेकके प्रतिपादन द्वारा संसारमार्गमें गमनकी सामग्रियोंका वर्णन किया गया है.

[क/५] विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अवान्तर

ब्रह्मभाव प्रकरणवाले पांचवें, अर्थात् आदितः अट्ठाईसवें, अध्यायमें सर्ववस्तुओंके सार्थक विनाशके प्रतिपादनद्वारा मुक्तिमार्गमें गमनकी सामग्रियोंका वर्णन किया गया है.

[क/६] विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अवान्तर ब्रह्मभाव प्रकरणवाले छट्ठे, अर्थात् आदितः उनत्तीसवें, अध्यायमें सभी सन्देहोंको दूर करनेके बाद फलका निरूपण किया गया है.

[ख] भगवत्सायुज्यरूप मोक्ष, क्योंकि, साधन प्रसाद और फल यों तीन तरहसे प्रचेतसोंको सिद्ध हुवा इसलिये सायुज्यके प्रकरणमें तीन अध्याय समायोजित हुवे हैं.

[ख/१] विसर्गलीलाके अन्तर्गत परम मोक्षरूप प्रकरणके अवान्तर भगवत्सायुज्य प्रकरणवाले प्रथम, अर्थात् आदितः तीसवें, अध्यायमें प्रचेतसोंको प्राप्त भगवत्प्रसादका वर्णन किया गया है.

[ख/२] विसर्गलीलाके अन्तर्गत परममोक्षप्रकरणके अवान्तर भगवत्सायुज्य प्रकरणवाले द्वितीय, अर्थात् आदितः इकत्तीसवें, अध्यायमें परमफलका वर्णन किया गया है.

यों पांच ब्रह्मभावके और तीन सायुज्यके बराबर आठ अध्यायोंमें मोक्षप्रकरण वर्णित हुवा है. इस तरह विसर्गलीलाका निरूपण इकत्तीस अध्यायोंद्वारा पूर्ण किया गया है.

भागवतार्थ निबन्ध गत प्रकरण – अध्यायार्थ।
गोकुलराय–घनश्यामजी–रचित–ग्रन्थबोधार्थ॥
हिन्दी भाषा में रचा एक काय सरलार्थ।
श्याममनोहरकी कृति निजमतिके शोधार्थ॥